卐 ॐ 卐

मानव धर्म की समग्र दृष्टि

''सत्यम् शिवम् सुन्दरम्''

वैदिक धर्म में अनेक विशेषताएं हैं, उनमें से **'समग्रता की सोच'** एक ऐसी सोच है, जिसके कारण यह धर्म सार्वभौमिक, सार्वकालिक एवम् सार्वजनीन धर्म बना । इसीलिए यह **'मानव-धर्म'** भी कहलाया । निम्न पंक्तियों में इस सम्बन्ध में कुछ तथ्य प्रस्तुत हैं।

1. समग्रता की सोच :- भारतीय मनीषियों ने अपनी सर्वतोमुखी खोजों में अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है । प्रकृति के रहस्यों की जाँच करते-करते, उन्हें अनेक मोती हाथ लगे, जिन्हें उन्होंने जीवन की माला में बड़े सुन्दर ढंग से पिरोया और हमें विरासत में दे गये । समग्रता की सोच उनमें से एक ऐसा अनमोल मोती है, जिसने **''सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम्''** जैसे महान सूक्त को जन्म दिया । इस समग्रता के विचार को उपनिषद् के निम्न श्लोक द्वारा बड़े सुन्दर ढंग से व्यक्त किया गया है-

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदम्, पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

परन्तु हम मूल उद्देश्य को समझ नहीं पाये और अनेक स्थानों पर हमने उनके अर्थ के अनर्थ कर डाले तथा दिग्भ्रमित हो गये। उपरोक्त सूक्त भी अनेक भ्रान्त धारणाओं में से एक है। यह सूक्त दूरदर्शन वालों ने भी किसी भ्रान्ति अथवा अज्ञात भय के कारण अपने पटल पर से काट दिया। परन्तु शेष विद्वत्-समाज भी इस सम्बन्ध में दिग्-भ्रमित है।

अत: **'समग्रता की सोच'** अर्थात् विशाल दृष्टि के इस भाव को एक उदाहरण द्वारा निम्न प्रकार से स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है । मान लें, कि तीन मंजिल ऊँचे मकान की छत पर चढ़ कर एक वर्ग मील का क्षेत्र देखा जा सकता हैं, तो किसी मीनार पर चढ़ कर सौ वर्ग मील का और यदि हवाई जहाज से देखें, तो शायद पचास हजार वर्ग मील तक का क्षेत्र देख सकेंगे, परन्तु चन्द्रमा पर पहुँच कर तो पूरी घूमती हुई पृथ्वी को देख लेंगे । इसी प्रकार अलग-अलग पन्थों, सम्प्रदायों एवम् धर्मावलम्बियों की दृष्टि किसी-न-किसी मात्रा में सीमित ही है, परन्तु विज्ञान की दृष्टि विराट है, अतएव सम्पूर्णता को देख सकने वाला ऋषि ही वास्तव में विज्ञानी है । इसी कारण **शास्त्रों** ने विज्ञानी को सर्वश्रेष्ठ घोषित किया है । विज्ञानी का अर्थ है, जो सम्पूर्ण अध्यात्म, पदार्थ-विज्ञान (Material Sciences), साहित्य एवम् कला का ज्ञाता हो । इसी सम्पूर्णता के विचार के कारण ऋषियों ने **'सत्य'** अर्थात् **'विज्ञान'** के साथ **'सुन्दरम्'** अर्थात् 'ललित-कलाओं' का संगम कराने का प्रयास किया था । निम्न पंक्तियों में उपरोक्त विचार पर एक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है ।

2. (a) सुन्दरम् :- शास्त्रीय संगीत, नृत्य, वाद्य, चित्रकला, मूर्तिकला, काव्य, साहित्य, नाट्य, सम्वाद एवम् कथायें सुन्दरम् के अर्थ में आती हैं । इन्हीं ललित कलाओं के माध्यम से जीवन का सौन्दर्य एवं माधुर्य उद्घाटित होता है । साहित्य एवं काव्य विचारों एवं भावनाओं की रसपूर्ण अभिव्यक्ति के सुन्दरतम् माध्यम हैं ।

काव्य एवं ललित कलाओं के माध्यम से शृंगार, माधुर्य, प्रेम आदि सभी नौ रसों की अभिव्यक्ति बड़े सुन्दर ढंग से की जाती है । अतिश्योक्ति अलंकार, उपमा, दृष्टान्त, साहित्य के आवश्यक अंग हैं । उनके बिना साहित्य में माधुर्य नहीं आ पाता तथा पाठक उस रस की अनुभूति से वञ्चित रह जाता है, जो उस घटना के समय व्यक्त हो रही थी।

2. (b) सत्यम् :- सत्यम् का अर्थ है, जो शाश्वत है, जिसमें परिवर्तन नहीं होता । विज्ञान उस सत्य के तर्क-सम्मत प्रमाण प्रस्तुत करता हैं ।

3. सत्यम् एवम् सुन्दरम् का संगम :- ऋषियों ने अनुभव किया, कि जीवन की परिपूर्णता तथा शिव अर्थात् कल्याण तभी सम्भव है, जब सत्यम् को सुन्दरम् के साथ अर्थात् विज्ञान को साहित्य के साथ उचित अनुपात में जोड़ा जाये । **जब तक समाज में ऐसी समझ रही, तब तक समाज दिगभ्रमित नहीं था । एक अंगूर का उदाहरण लें, जिसका रस एवं गूदा अत्यन्त मधुर होता है परन्तु उसका बीज छोटा सा । जिस बीज से करोड़ों अंगूर पुनः पैदा हो सकते हैं । ईश्वर द्वारा निर्मित यह संगम कितना सुखद एवं पूर्ण (Perfect) है कदाचित् उसी को आदर्श मानकर भारतीय मनीषियों ने भी इस सम्बंध में अनेक प्रयास किए थे ।** कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं ।

(a) एक भौगोलिक सत्य :- हमारी पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से हुई है और वह एक लम्बे अन्तराल के पश्चात् हर प्रकार के जीवों के रहने के लिए उपयुक्त स्थान बन पायी। यह पृथ्वी सूर्य से अलग होने के पश्चात् अपने अक्ष पर 23½ अंश पर झुक कर महान् गुरुत्वाकर्षण शक्ति (Gravitational Force) के कारण सूर्य की परिक्रमा करने लगी ।

भारतीय ज्योतिषाचार्यों एवं साहित्यकारों ने उपरोक्त भौगोलिक सत्य को साहित्यिक अंदाज में निम्न प्रकार से व्यक्त किया है-

"सूर्य से अलग होकर पृथ्वी ने भक्त की भाँति अपने जन्मदाता सूर्य के सम्मुख अपना सिर झुका दिया व सूर्य की गति से गतिमान हुई वह स्वयं घूमती हुई भगवान अंशुमान (सूर्य) की प्रदक्षिणा करने लगी ।" *(स्कंदपुराण पृ0 62 "ब्रह्माण्ड और ज्योतिष रहस्य")*

(b) इसी प्रकार विन्ध्याचल पर्वत, जो कि एक पठार है (उसकी चोटी नहीं है) को अगस्त्य मुनि की कथा से जोड़ दिया गया । कथा कुछ इस प्रकार से है, कि बढ़ते विन्ध्याचल को रोकने के लिए गुरु अगस्त्य को भेजा गया । विन्ध्याचल ने साष्टांग लेट कर प्रणाम किया, तो गुरु जी ने आज्ञा दी, कि जब तक मैं लौट कर न आऊँ, लेटे ही रहना ।

(c) एक ऋषि वृद्ध थे उनकी पत्नी नौजवान थी। ऋषिपत्नी गंगा स्नान करने को गयी,

तो धर्मदेव नाम के व्यक्ति ने ऋषिपत्नी से कहा, कि तू नौजवान है और तेरा पति वृद्ध तू मेरे साथ ब्याह कर ले। तीन-चार बार जब धर्मदेव ने उस स्त्री को प्रलोभन दिया, तो ऋषिपत्नी ने उसे श्राप दे दिया **''जा तू क्षीण हो जा''** अर्थात् **''निर्बल हो जा''**। जब धर्मदेव निर्बल होने लगा, तो उसने कहा, कि हे देवी ! मैं तो साक्षात धर्म हूँ और तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए आया था। ऋषिपत्नी ने कहा, कि अब तू कुछ भी हो, श्राप तो दे ही दिया गया है और वह निश्चय ही फलित भी होगा। इस श्राप की कथा का अर्थ है, कि **धर्म के चार पद-''सत्य, तप, यज्ञ और दान'' माने गये हैं, परन्तु सतयुग में चार पद से, त्रेता में तीन पद से, द्वापर में दो पद से और कलियुग में धर्म एक ही पद से प्रतिष्ठित रहता है।**

काल के हिसाब से धर्म का क्रमशः ह्रास होता है, इस सत्य को जनमानस तक पहुँचाने के लिए इस रसीली कथा का सृजन किया गया। विनम्रता, भक्ति, रसीलापन, श्रृंगार आदि का पुट डालना भारतीय मनीषियों की सर्वमान्य विधा रही है । आखिर मानव स्वभाव ही ऐसा है, वरना नीरसता के कारण यह सत्य हम और आप तक पहुँचता ही नहीं। ***वास्तव में कथाएं हमें कुछ आध्यात्मिक शिक्षाएं देने के लिए रची गई थीं और उनको हमने सत्य कथा समझ लिया, अतः दिशा भ्रम तो होना ही था ।***

पुनः कवियों द्वारा किसी सुन्दरी की प्रशंसा में श्रृंगाररस से पूर्ण अनेक अतिश्योक्तिपूर्ण शब्दों का प्रयोग प्रचलित है, जैसे - चन्द्रमुखी, चन्दन-सा-बदन, गजगामिनी, मृगनयनी, आदि । ***इस प्रकार की भाषा द्वारा ईश्वरीय भाव को पुष्ट करना उद्देश्य था, जबकि समाज की समझ शरीर भाव में ही रह गयी, फलस्वरूप गम्भीर भ्रान्तियों का जन्म हुआ ।***

4. सुन्दरम् योजना का विस्तारः-

4.*(i)* ललित कलाएं एवम् साहित्य :- ललित कलाओं में जीवन का रस है, माधुर्य है । इन्हीं कलाओं का विज्ञान के साथ संगम स्थापित करके भारतीय मनीषियों ने जीवन को सम्पूर्ण बनाने की चेष्टा की थी । ***सभी कलाएं अर्थात् संगीत, वाद्य, नृत्य, चित्रकारी, मूर्तिकला, नाट्यलीला एवं साहित्य अर्थात् काव्य, सम्वाद, कथाएं आदि, सभी मन को एकाग्रता की सीमा तक पहुँचाने के साधन हैं । इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर इन कलाओं का विकास किया गया था । कला एवं साहित्य का यह संगम भारतीय मनीषियों की श्रेष्ठतम कृति है ।***

4.*(ii)* शास्त्रीय संगीतः- शास्त्रीय संगीत में राग-रागनियों की पूरी शृंखला है, जैसे- राग भैरव, मालकोश, भूपाली, मल्हार, बिलावल, यमन तथा नृत्यों में भरतनाट्यम्, ओडिसी और कत्थक एवं प्राचीन वाद्य यन्त्रों में वीणा, मुरली, तानपूरा, सितार, सारंगी, डमरू, घंटा, ढोलक, तबला इत्यादि तथा नए वाद्य जैसे- हारमोनियम, गिटार, वायलिन, जलतरंग, आदि काफी जनप्रिय हैं । **भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं नृत्य, जो मानव मन को परम शान्ति एवं आनन्द प्रदान करता हुआ साधक को ईश्वर के द्वार तक पहुँचा देता है, विश्व**

में अद्वितीय है । चित्रकारी और मूर्ति-कला मन्दिरों तथा बड़े-बड़े भवनों तथा राज-प्रसादों की शोभा बढ़ाती हैं तथा जनमानस को ऐतिहासिकता एवं प्राचीनता का गौरव दर्शाते हुए ईश्वरीय प्रेरणा प्रदान करती हैं । काव्य, कथाएं और नाट्यलीला सदा से अत्यन्त प्रेरणादायी और जनप्रिय रहे हैं । वर्तमान को अतीत से जोड़े रखने के ये तीनों बड़े ही सशक्त माध्यम साबित हुए हैं । इन्हीं सबको संस्कृति के नाम से जाना गया और **हमारी यह सांस्कृतिक धरोहर बड़ी ही समृद्ध रही है । इससे हमारी अर्थात् हिन्दू की विशेष पहचान बनी।**

4.*(iii)* सम्वाद एवम् कथाएँ :- छोटी-छोटी कथाओं एवं सम्वादों के माध्यम से अध्यात्म को सरल से सरल ढंग से मानव के मानस तक उतारने का एक और गम्भीर प्रयास किया गया है । यह एक अति सफल मनोवैज्ञानिक एवं सशक्त माध्यम साबित हुआ। इस योजना के अन्तर्गत गुरु-शिष्य सम्वाद के रूप में ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया गया । उपनिषद्, गीता, ब्रह्म-सूत्र आदि ग्रंथ इसके अच्छे उदाहरण हैं। क्योंकि यह उपदेश काफी गूढ़ था अतएव इनको कथाओं के माध्यम से और सरल बनाया गया, ताकि निम्न से निम्नतम बौद्धिक स्तर के व्यक्ति तक ब्रह्म-ज्ञान का भाव पहुँचाया जा सके। ये माध्यम बड़े ही सशक्त तथा सफल साबित हुए, क्योंकि सम्वाद एवं कथाएं सुनने की रुचि सभी उम्र के व्यक्तियों में स्वाभाविक रूप से होती है तथा इस माध्यम से गूढ़ से गूढ़तम उपदेश सुनने वाले के अहम् को बिना चोट पहुँचाए उसके हृदय तक सरलता से पहुँचाया जा सकता है। संक्षेप में कहें, तो उदाहरण के लिए कठोपनिषद् में नचिकेता का यम के साथ सम्वाद तथा सत्यनारायण व्रत कथाएं, ये दोनों जन-साधारण में काफी चर्चित हैं। **'श्रीमद्भागवत-महापुराण'** में महर्षि वेदव्यास द्वारा प्रतीक विज्ञान के आधार पर लिखित सुन्दर रसीली कथाओं का श्रेष्ठतम संगम बन पड़ा है, इसीलिए लाखों लोग इसे सुनने जाते हैं । नचिकेता-यम के सम्वाद द्वारा **'ब्रह्म-ज्ञान'** का तथा सत्यनारायण कथा द्वारा **'कर्म के सिद्धान्त'** का संदेश दिया गया है। **'भागवत-कथा'** द्वारा **कृष्ण-भक्ति** का संदेश अति सुन्दर ढंग से दिया गया है।

4.(iv) प्रतीकीकरण की प्रक्रिया :- श्रीरामचरितमानस में भगवान शंकर निर्गुण ब्रह्म की व्याख्या करते हुए कहते हैं [a] :-

आदि अन्त कोउ जासु न पावा । मति अनुमानि निगम अस गावा ॥
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना । कर बिनु करम करइ विधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी । बिनु बानी बकता बड़ जोगी ॥
तन बिनु परस नयन बिनु देखा । ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा ॥
असि सब भाँति अलौकिक करनी । महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ॥

अर्थ :- आज तक उस ब्रह्म का आदि तथा अन्त कोई भी नहीं जान पाया है तथा वेद ने अपनी बुद्धि से अनुमान करके इस प्रकार से वर्णन किया है, कि वह ब्रह्म बिना पैरों के चलता है तथा बिना कानों के सुनता है एवं बिना हाथों के अनेक प्रकार के कार्यों को करता भी है । बिना मुख के वह सभी प्रकार के रसों का आनन्द लेता है तथा बिना

वाणी (जीभ) के वह महान योग्य वक्ता भी है । वह बिना शरीर के स्पर्श भी कर सकता है तथा आँखों के बिना देख भी सकता है एवं बिना नाक के सभी प्रकार की गंध को सूँघ सकता है । उस परमात्मा के कार्य करने के ढंग बड़े ही विचित्र हैं, उसकी महिमा का वर्णन करना अति कठिन है ।

उस निराकार ब्रह्म की उपरोक्त दुरूह परिभाषा के कारण ऋषियों ने सर्वसाधारण के लिए ब्रह्म की एवं समाधि-सुख की प्राप्ति को लगभग असम्भव ही माना और ***तब उन्होंने ब्रह्म के सगुण रूप अर्थात् आकाशगंगा, जिसे ब्रह्म का शरीर अथवा विराट् पुरुष कहा गया, से उपासना प्रारम्भ करना उचित समझा । अर्थात् अव्यक्त एवम् अज्ञात (ब्रह्म) को ज्ञात माध्यमों के द्वारा जानने का सिद्धान्त तय हुआ ।***

(a) पहला सुझाव गायत्री मन्त्र द्वारा ऋषि विश्वामित्र ने दिया- **"सूर्य में प्रकट प्रकाश का ध्यान करो, एवं ॐ नाम का जप करो"** । सूर्य प्रत्यक्ष देवता है, अतएव ऋषि ने उसके प्रकाश पर ध्यान एकाग्र करने का परामर्श दिया । अरबों आकाशगंगाओं के सतत् गतिशील होने से उत्पन्न ध्वनि को **'ॐ'** शब्द के रूप में जप के लिए स्वीकार कर लिया गया । *(कृपया चित्र को ध्यान से देखें)* । **तारा समूहों की रचना कुछ इस प्रकार से है, कि ब्रह्मलोक के बाह्य सर्पिल घेरों को यदि हटा दें, तो "ॐ" का चित्र स्वतः ही बन रहा है जिसे ध्यान हेतु मान लिया गया । ऐसा लगता है, कि इन तारा समूहों की रचना के आधार पर ही 'ॐ' शब्द का चित्रांकन किया गया ।**

(b) दूसरा सुझाव कठोपनिषद् के ऋषि ने दिया, *"अंगुष्ठ मात्रः पुरुषो मध्य आत्मनि तिष्ठति ज्योतिरिवाधूमकः"* अर्थात् बिना धुएँ का ज्योतिस्वरूप, अँगूठे के आकार का आत्मा आकाशगंगा[a] के केन्द्र में स्थित है, उसका ध्यान करो । **आकाशगंगा के केन्द्र पर न्यूट्रॉन तारों का सघन पिण्ड विशाल शिवलिंग जैसा बन रहा है। ऐसा लगता है, कि मानव शरीर में स्थित अँगूठे के आकार के आत्मा के सुझाव द्वारा पूरे भारत में बारह ज्योतिर्लिंगों की स्थापना की गयी है। यह सुझाव पहले सुझाव की अपेक्षा कुछ अधिक ठोस आधार प्रदान करता हुआ लगा । इसीलिए ध्यान-साधना हेतु अधिक जनप्रिय साबित हुआ, क्योंकि ऋषिगण अपने चित्तपटल पर ध्यान द्वारा सभी सूक्ष्म शक्तियों का दर्शन करने में समर्थ थे, अतः भौतिक-यंत्रों की आवश्यकता ही न थी, तथापि आज ये चित्र Radio Telescope द्वारा आसानी से देखे तथा बना लिये गये हैं, जिससे ऋषियों की बात पूर्णतः सत्यापित हो गयी है ।**

(c) ऐसा प्रतीत होता है, कि कुछ मनीषियों ने विचार दिया होगा, कि क्यों न चन्द्रबिन्दु से संयुक्त **'ॐ'** पर ध्यान केन्द्रित करने की विधि को अपनाया जाये, क्योंकि चन्द्रमा नक्षत्रों का अधिपति है तथा शान्ति का प्रतीक भी । इसीलिए मन्त्र दिया

---

a यह परिभाषा "यथा पिण्डे, तथा ब्रह्माण्डे" सूत्र के आधार पर लिखी गयी है, क्योंकि इस श्लोक में मानव शरीर में स्थित अँगूठे के आकार की आत्मा के सम्बन्ध में उपनिषद् जो इंगित कर रहा है, वही बात विराट (आकाशगंगा) में भी घटित होती है।

ओंकार बिन्दु संयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नमः ।

(d) कुछ विद्वानों ने सम्पूर्ण आकाशगंगा की अर्थात् ब्रह्म के पूरे शरीर की उपासना करने का प्रस्ताव रखा, क्योंकि अमावस्या की रात्रि में श्वेत झिलमिलाते तारों की यह पूरी की पूरी लम्बी श्वेत नदी, हर जनसाधारण के द्वारा प्रत्यक्ष देखी जा सकती है । अतएव सरल से सरलतम विधि का परामर्श दिया गया और प्रतीक की भाषा में भारत की पवित्र देवनदी गंगा को उस आकाशगंगा के प्रतीक के रूप में मान्यता दे दी गयी ।

(e) अन्य प्रतीक :- इस प्रकार **''सुन्दरम''** योजना के अन्तर्गत ऋषियों ने एक विशाल **'साहित्य'** का सृजन किया है । ऐसा प्रतीत होता है कि इस साहित्य का विश्लेषण परतन्त्रता के एक सहस्त्र वर्ष के दौरान नष्ट कर दिया गया । अतः शीघ्र उपलब्ध नहीं है। अध्यात्म के दुरूह ज्ञान के सरलीकरण की प्रक्रिया में इन प्रतीकों का सृजन हुआ था। अतः ''प्रतीकों'' की भाषा के स्पष्टीकरण की आवश्यकता का आज गम्भीरता से अनुभव किया जा रहा हैं । इस प्रकार ज्ञान, विज्ञान, योग, धारणा, ध्यान तथा समाधि की जटिल जानकारी को भी प्रतीकों के माध्यम से समझाने का प्रयास किया गया और विराट-विश्व में बड़ी-बड़ी शक्तियों का देवी-देवताओं के रूप में मूर्तिकरण एवं प्रतीकीकरण किया गया। कथाओं में प्रयुक्त अन्य प्रतीकों जैसे- पारस, पारिजात, हलाहल-विष, अमृत, हंस, कल्पवृक्ष, कामधेनु, गंगा, जमुना एवं सरस्वती, नदियाँ, देवता, दानव, त्रिगुणमयी-माया, कच्छप, वासुकि-नाग, मन्दराचल, सुमेरु पर्वत, क्षीर-सागर, गंगावतरण, समुद्र-मंथन, कैलाश, मानसरोवर, गरुड़, नन्दी, सिंह, चूहा, मोर, एरावत, कामदेव, रति, कर्मनाशा इत्यादि का भी खुलासा करने की आवश्यकता है । इस लेख में दो तीन उदाहरणों से ही प्रतीकों की भाषा का खुलासा किया जा रहा है । विस्तार के लिए लेखक द्वारा लिखित **''प्रतीक विज्ञान''**, **''उपास्य देवों की वैज्ञानिक व्याख्या''** एवं **''मूर्तिपूजा- एक वैज्ञानिक मीमांसा''** नामक लेखों को देखें जो पुस्तक के भाग-3 में हैं।

(f) गीता के अध्याय ग्यारह में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जो विराट रूप दिखलाया है, उसमें उन्होंने अर्जुन से कहा, कि देखो अर्जुन ! मेरे करोड़ों हाथ हैं, करोड़ों पेट हैं तथा करोड़ों आँखें हैं । ऋषियों ने **'ब्रह्माण्ड'** को ब्रह्म का शरीर माना है, इसीलिए इसका वर्णन इस भाषा में किया गया है। नभोभौतिकी (Astrophysics) के अनुसार अरबों आकाशगंगाएं हैं तथा हर आकाशगंगा में करोड़ों सूर्य एवं चन्द्र हैं, इत्यादि । ***इस प्रकार गीता में कही गई बात वास्तव में वैज्ञानिक तथ्यों का मानवीकृत प्रतीकात्मक प्रस्तुतीकरण है । इसे हम यह भी कह सकते हैं, कि वैज्ञानिक भाषा का साहित्यिकी अनुवाद है ।*** गरजते हुए **'बादल'** को **'इन्द्र'** कहा गया है । एक सौम्य पुरुष अग्नि शिखाओं के बीच हाथ में **'हविष्य-चुरु'** लिए अग्नि देवता है, आदि । इसी प्रकार सभी दैवी शक्तियों का मूर्तिकरण एवं चित्रांकन किया गया है । वेदों से लेकर रामायण, गीता, उपनिषद, संहिताएं एवं ब्राह्मणग्रन्थों तक सर्वत्र इसी प्रकार की प्रतीकात्मक भाषा का बहुतायत से प्रयोग किया गया है । **सदियों के**

संस्कार के कारण आज अधिकतर विद्वान एवं पत्रकार शाब्दिक अर्थों को ही समझते हैं । इन प्रतीकों की विश्लेषणात्मक भाषा को समझने वाले विद्वानों की संख्या नगण्य प्रतीत होती हैं ।

5. प्रतीक साहित्य से विभ्रमः- इस साहित्य की विशालता और गूढ़ता दिन-प्रतिदिन दुरूह होती गयी और समय के साथ-साथ इसका ठीक-ठीक अर्थ बतलाने वाले विद्वानों का लोप होता गया और फिर अर्थ के स्थान पर विलोम अर्थ किए गए । कुछ उदाहरण प्रस्तुत है:-

(i) जैसे "गो रक्षा" का अर्थ गो (पशु) की रक्षा करना मात्र कर लिया गया, जबकि "गो रक्षा" का अर्थ मातृभूमि की रक्षा करना था, अर्थात् जिस भूमि पर राष्ट्र के नागरिक निवास करते हैं, उसकी रक्षा करना था । *(इस सम्बन्ध में "गो-मातृभूमि का प्रतीक" नामक लेख पुस्तक के भाग-3 में देखें ।)*

(ii) इसी प्रकार **'गोत्र'** तथा **'वर्ण-व्यवस्था'** के अर्थो के गलत अर्थ लगाए गये, जिससे ऊँच-नीच का भाव पनपा और हिन्दूसमाज की एक बड़ी जनसंख्या को विधर्मी बनने में सहायता मिली । इसके कारण देश में प्रतिक्रियावादी धर्मों का जन्म भी हुआ। वीर सेनापति हेमू बनिया था, इसलिए राजपूतों ने साथ छोड़ दिया और देश गुलाम बना। हम आज भी इन विचारों से उबर नहीं पा रहे हैं।

(iii) *'यज्ञ'* शब्द का अर्थ संकुचित भाव में करके अग्निहोत्र कर लिया गया, जबकि समग्र दृष्टि से देखने पर 'यज्ञ' का अर्थ है- 'निष्काम सेवा'। वेद द्वारा बतलाए मार्ग पर चलता हुआ हर वानप्रस्थी यदि तन-मन-धन से समाज सेवा (निष्काम सेवा) में जुट जाये, तो न राष्ट्र में गरीबी रहेगी, न अशिक्षा और न ही अशान्ति। मात्र राष्ट्र में ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति का जीवन सुख और शान्तिमय होगा ।

(iv) काल की विचित्र गति के कारण 'गायत्री मन्त्र', जो एक शोध (Research) मंत्र है, उसको हमने प्रार्थना मंत्र बना लिया । हमें यह विश्वास दिलाया गया, कि इस मन्त्र के जपने/ रटने मात्र से सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं । **वस्तुतः गायत्री मन्त्र के क्रान्तिकारी विचार ने विश्वसमाज को निर्गुण-निराकार उपासना पद्धति के मार्ग से निकाल कर सगुण-साकार उपासना के सरल मार्ग पर ला खड़ा किया । इसी महानता के कारण भगवान श्रीकृष्ण ने इस मन्त्र को अपने बराबर का दर्जा *("छन्दसामहम् गायत्री" - गीता 10/35)* प्रदान किया है और तभी से यह महामन्त्र कहलाया ।**

ऋषि विश्वामित्र को एक लम्बे संघर्ष के पश्चात् ही सफलता मिली । सैकड़ों खण्डन-मण्डन (शास्त्रार्थ) के पश्चात् अन्त में **ऋषि वशिष्ठ ने इस सिद्धान्त को जनहित में सार्वजनिक रूप से मान्यता प्रदान कर दी तथा ऋषि विश्वामित्र को ब्रह्मर्षि (Noble Laureate) की उपाधि से विभूषित कर दिया । तब से गायत्री को 'वेदमाता' कहा जाने लगा । (इस सम्बन्ध में "सनातन धर्म का आधार-गायत्री मंत्र" नामक लेख पुस्तक के भाग-3 में देखें) ।**

***(vi)* सुखद आशा:-** बीजों और प्रतीकों की भाषा द्वारा जो ज्ञान हम तक पहुँचा है, उस वट के बीज को शाखा, पत्ते, पुष्प एवं फल के रूप में विकसित होने देने में ही हम सबका कल्याण हैं । विज्ञान के युग में रहस्यात्मकता का पर्दा उठाने की और विज्ञान के प्रकाश को विश्व की नयी पीढ़ी तक प्रसारित करने की आज महती आवश्यकता है। रहस्य का पर्दा उठते ही अंधश्रद्धा दूर होगी तथा वैज्ञानिक बुद्धि वाली आज की युवा हो रही पीढ़ी को धर्म की गूढ़ एवं उत्तम समझ विज्ञान द्वारा संतोषजनक ढंग से प्राप्त होगी, ऐसी आशा है ।

जिस प्रकार अंगूर के रस और गूदे के बीच छोटा सा बीज छिपा होता है, उसी प्रकार प्रकृति (माया) से ब्रह्म प्रच्छन्न रहता है और इसी प्रकार ऋषियों ने साहित्य से विज्ञान को ढक दिया है, क्योंकि समाज में साहित्य एवं कला के विद्यार्थी सदैव से अधिसंख्या में रहे हैं और आगे भी रहेंगे । साहित्य के विद्यार्थी स्वभावतः भावना-प्रधान होते हैं और अपने बहुमत के कारण अपना वर्चस्व शीघ्र ही स्थापित कर लेते हैं । ऐसा देखा गया है, कि हर किसी एक काल में समाज किसी न किसी एक अति की ओर झुक जाता है ओर फिर घड़ी के पेण्डुलम की भाँति वह दूसरी अति की ओर मुड़ता है । लगता है, कि भावी पीढ़ी जो लगभग वैज्ञानिक पीढ़ी होगी, परम्परागत (शाब्दिक अर्थ वाले) ज्ञान को पूर्णरूप से नकार देगी और तब अगली अर्थात् 5200 वीं शताब्दी (युगाब्द) विश्लेषणात्मक ज्ञान विज्ञान की शताब्दी होगी।

हरिः ॐ तत् सत् !

निवेदन :-

1. आज भी दूरदर्शन द्वारा प्रसारित प्रोग्राम प्रायः कला, साहित्य एवं विज्ञान पर ही आधरित होते हैं, अतएव दूरदर्शन के पटल पर पूर्वोक्त **'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्'** प्रतीक चिह्न का चित्रांकन पुनः स्थापित किया जाना न्यायसंगत होगा ।
2. ज्ञान एक अथाह सागर है । ज्ञान किसी भी क्षेत्र का क्यों न हो, व्यक्ति को अपने अनवरत अध्यवसाय से ही प्राप्त होता है । परन्तु सम्पूर्ण ज्ञान अर्थात् सभी क्षेत्रों के ज्ञान को एक ही व्यक्ति आत्मसात् कर ले, यह असम्भव है, क्योंकि ज्ञान का अर्जन एक सामूहिक प्रयास है, परन्तु भौतिक क्षेत्र के ज्ञान को यदि आध्यात्मिक क्षेत्र के ज्ञान से जोड़ने का प्रयास किया जाये, तो यह कार्य अपने आप में एक बहुत विशाल सेतु बनाने जैसा होगा, जिससे खण्ड-खण्ड में बिखरी मानव समझ कम से कम एक माला में पिरोई जा सकती है और यह संयोग यदि प्राप्त हो जाये, तो अपने आप में एक स्तुत्य प्रयास समझा जाना चाहिए । आज की भौतिक विज्ञान की पीढ़ी को अध्यात्म विज्ञान से जोड़ने की परम आवश्यकता है । आदरणीय पाठकगण इस महती कार्य की आवश्यकता को समझते हुए इस प्रकार के लेखन को अपना वरदहस्त प्रदान करेंगे, ऐसी आशा है ।
3. आदरणीय पाठकों से निवेदन है कि वे अपने विचारों से लेखक को अवगत कराएं, जिसके लिए लेखक उनका अग्रिम धन्यवाद करता है । इस लेख के साथ **'प्रतीक विज्ञान'** के लेख को पढ़ा जाये, तो स्थिति अधिक स्पष्ट होगी ।